Journal of Advances and Scholarly Researches in Allied Education
Vol. XIV, Issue No. 2, January-2018, ISSN 2230-7540

सातवें दशक के उपन्यासों में चित्रित नारी-चेतना

Pratima[1]* Dr. Praveen Kumar[2]

[1] Researcher, Ph.D. (Hindi), OPJS University, Churu, Rajasthan

[2] Research Director, Hindi Department, OPJS University, Churu, Rajasthan

सार – *डॉ. देवराज के शब्दों में "शिक्षा का विशिष्ट उद्देश्य है। शिक्षार्थी के व्यक्तित्व का गुणात्मक विकास दुनिया के महान लोगों की बौद्धिक तथा आवेगात्मक प्रक्रियाओं में सांझेदार बनकर शिक्षार्थी अपने व्यक्तित्व का विकास करता है।[1] अतः व्यक्ति में आत्मबोध व आत्मनिर्भरता के गुण का सूत्रपात शिक्षा के माध्यम से ही सम्भव होता है। शालमली उपन्यास में शिक्षा के व्यापक अर्थ को परिभाषित किया गया है। शालमली के अनुसार "शिक्षा का अर्थ है व्यवहार में व्यापकता और सोच की जटिलता को तोड़कर उसमें विस्तार लाना।[2] नारी में शिक्षित होकर नया आत्मबोध की चेतना इस युग की सबसे बड़ी देन है। शिक्षा जानकारी या डिग्री के लिए न होकर जीवन-निर्माण के लिए जरूरी है। इससे व्यक्ति के भीतर के सर्वोत्तम का विकास होता है। 'अशेष' उपन्यास में मंजरी भी इस तथ्य को स्वीकारती है, उसके अनुसार शिक्षा मनुष्य में स्वाभिमान जगा देती है और उसी को लेकर विपरीत स्थितियाँ का सामना करता है।[3] अर्थात शिक्षा का उद्देश्य है व्यक्ति में ऐसी योग्यताओं को उत्पन्न करना, जिनके द्वारा वह विभिन्न मूल्यों की सुरक्षा, सृष्टि तथा उपभोग कर सके।[4] क्योंकि नारी के शिक्षित होने के बाद ही उसने अपने अधिकारों के प्रति सजगता का अनुभव किया। अब वह विवाह तक ही सीमित नहीं है, वरन् अपने कैरियर के बारे में भी पूर्ण रूप से सोचती है। शाल्मली उपन्यास में शाल्मली के अनुसार "इस कम्पीटीशन में आ गई। तो उसका जीवन बदल जायेगा वह घर बाहर कुछ कर सकती है। अपनी मर्जी से अपने घर परिवार को संभाल सकती है। वरना हर बात पर पति के आगे हाथ फैलाना पडेगा।[5] यह सोच मात्र शाल्मली की ही नहीं वरन् नारी की मानसिकता की है पात्र चाहे कोई भी हो। अशेष उपन्यास में मंजरी भी कहती है "उसे जल्दी नौकरी कर लेनी चाहिए-किसी छोटी जगह के स्कूल में फिर आगे पढ़ते रहना चाहिए। प्रयाग उसकी सहायता कर सकते हैं आत्मनिर्भर होना उसके लिए आवश्यक है।[6]*

----------X----------

1. शिक्षा का प्रसार और आत्मनिर्भरता का विश्वास:

शिक्षा के प्रसार ने नारी को एक नयी दृष्टि व आत्मनिर्भरता प्रदान की है। महरूख कहती है "एक घर औरत का अपना भी हो सकता है जो उसके बाप व शहर के घर से अलग, उसकी मेहनत और पहचान का हो।[7] वह सदैव पुरुष पर आश्रित नहीं रहना चाहती, उसके अनुसार उसका भी अपना व्यक्तित्व है। शेष यात्रा में ईडी कहती है" आदमी जो कर सकता है वह हम औरतें भी कर सकती है।[8] यह स्थिति एक वर्ग विशेष तक ही सीमित नहीं है, वरन चाहे वह उच्च मध्यम वर्ग हो या निम्न मध्यम वर्ग, शिक्षा के प्रति रुझान व उससे बढ़ते आत्मबोध निम्न वर्ग के अनेक पात्रों द्वारा देखने को मिलता है। 'ठीकरे की मंगनी' उपन्यास में गाँव में राजों ने पढ़ना-लिखना प्रारम्भ कर दिया वह धोवन है।[9] मंजुल भगत के उपन्यास 'अनारो' में शिक्षा के प्रति जागरुकता दिखाई पड़ती है। अनारो स्वयं चैका बर्तन करने वाली स्त्री है किन्तु उसकी जीवन्तता, "बच्चों को मनसपलेटी के स्कूल में दाखिला दिला दिया है ताकि वे भी आत्मनिर्भर बन सके। जीवन को जीने की ललक इस वर्ग में कूट-कूट कर भरी है। नारियाँ विद्रोही किन्तु जिम्मेदारियों से मुंह नहीं मोड़ती। वे आर्थिक रुप से स्वतन्त्र है। सावित्तरी उपन्यास में मीता भी अपने शिक्षित होने का फायदा उठाना चाहती है। उसमे भी आत्मनिर्भर होने की ललक है। वह कहती है, गृहस्थी में पति का हाथ बंटाना उसे नयी स्फूर्ति देता है, वह कहती है "मैं सोचती थी कि कहीं किसी स्कूल में पढ़ाने लगूंगी तो हाथ बंटेगा।[10] उम्र एक गलियारे की नायिका सुनन्दा सोचती है कितने लम्बे अरसे से वह किसी अन्य पर निर्भर घूम रही है, किन्तु अब उसे नया आत्मबोध हुआ है कि "क्यों न वह स्वयं के लिए नयी राह खोजे।, आत्मनिर्भर बने।[11]

2. मध्यमवर्गीय संस्कृति का विश्वास और ह्रास:

समाज व्यवस्था में प्रायः तीन वर्गों की अवधारणा है। उच्च वर्ग, मध्य वर्ग व निम्न वर्ग। नैतिक मापदण्ड, जीवन मूल्यों का प्रश्न, संस्कृति को प्रभावित करता है। उच्च वर्ग को इन

www.ignited.in

जीवन मूल्यों का व विश्वासों से कोई खास फर्क नहीं पड़ता क्योंकि उनके हाथ में समाज की बागडोर होती है। वे प्रतिष्ठित कहे जाते है। निम्न वर्ग मेहनत मजदूरी कर अपना पेट पालता है। वह झूठी मान्याताएँ व जीवन मूल्यों को स्वीकार नहीं करता। वह काम को ही पूजा व काम को ही ईश्वर मानता है। मध्य वर्ग पर दोनों ओर से दबाब रहता है। ऊँचे उठने की कोशिश में वह सदैव झूठी शान-शौकत व मर्यादाओं को निभाता चला जाता है, यह वर्ग मूलतः नौकरी पेशा रहा है।

आधुनिक परिवेश में शिक्षा, औद्योगिक विकास और तकनीकी विकास ने समाज को अर्थ से परिचालित किया है। औद्योगिक परिस्थितियों ने वर्ग संघर्ष और वैषम्य को बढ़ा दिया है। फलतः अमीर और अमीर हुआ और गरीब और गरीब। इन परिस्थितियों ने सर्वाधिक मध्यवर्ग को प्रभावित किया। मध्यवर्ग की जिन्दगी में विरोधी परिस्थितियों की टकराहट अपेक्षाकृत अधिक होती है। अतः वर्तमान युग की विषम परिस्थितियों की कड़वाहट सबसे अधिक मध्यवर्ग ने सही है।[12] मध्यवर्ग महत्वाकांक्षी व संघर्षशील हैं। खासतौर से इस वर्ग की नारी को सबसे अधिक संघर्ष झेलने पड़े घर से बाहर निकलने की प्रक्रिया में तनावग्रस्त रही। साथ ही घर व बाहर दोनों की जिम्मेदारियों को निभा रही है। साथ ही उसे अपनी नैतिक मान्यताओं की घबराहट सदैव रहती है। डॉ. स्वर्णलता के अनुसार "आज की बदलती परिस्थितियों के दमघोंटू वातावरण ने मानव के जीवन में विभिन्न बिखराव उत्पन्न कर दिया है। आज जिन्दगी की कड़वाहट सबसे अधिक मध्यवर्गीय व्यक्ति को पीनी पड़ती है। क्योंकि न तो वह उच्च वर्ग का अंग बन सकता है न अपने अहम के कारण निम्नवर्ग वालों से मिल सकता है। थोथी अहममन्यता का जुआ इच्छा रहते अपनी गर्दन से नहीं निकाल पाता, वैयक्तिक मान्यताएँ जितनी तेजी से बदली, सामाजिक प्रतिरोधों ने उतना ही दबाने की कोशिश की।[13]

आज मध्यवर्ग घुटन, कुण्ठा, संत्रास, पीड़ा, व्यथा, अकेलापन और अजनबीपन से ग्रस्त है। अतः समाज में मध्यवर्ग ही खोखले आदर्शों का भार वहन करता हुआ मुखौटा पहन परम्पराओं का बोझ ढोता हुआ अर्थतन्त्र के सांचे में पिसता हुआ, अजब हारा हुआ सा दीख पड़ता है। जीवन की असंगतियों और काम कुण्ठाओं के बीच सबसे अधिक द्वन्द्वग्रस्त मध्यवर्ग ही होता है।[14]

3. समाज के प्रति विरक्ति:

व्यक्ति के जीवन को सही रूप से चलाने हेतु समाज के नियमों को समझना व उसकी पालना करना आवश्यक समझा जाता है। परन्तु परिवेश परिस्थितियों का इसमें सक्रिय योगदान रहता है। अकेलापन यान्त्रिकीकरण व नारी की अन्य समस्याओं जैसे जन्म, विवाह, शिक्षा आदि आरोपित न होकर प्रभाव डालते हैं। समाज में नियमों का उल्लंघन नर-नारी के सहज सम्बंधों में परिवर्तन, अर्थचालित समाज इन सभी परिस्थितियों ने नारी को अन्दर से खोखला बना दिया, वह शून्यभाव से भर उठी है।

समाज जो सुरक्षा प्रदान करता है, वही समाज जब नारी का सर्वस्व लूटने पर लगा हो तब उस समाज के प्रति नारी की विरक्ति स्वभाविक है। वैचिन्त कौर के उपन्यास माटी में नारी की दयनीय स्थिति का उभारा है। जिस नारी को विवाह अनुष्ठान पूर्ण करवाकर घर में लाता है। उसी से शराब के पैसों के कारण गलत कार्य करवाने को उकसाता है। वही दूसरी ओर अनु अपने पति को विवाहित होने पर भी उसका पति अन्य स्त्रियों से सम्बन्ध रखता है। बसन्ती हो या अनारो, सुधा हो या लोरेन इन सभी की मानसिक स्थिति लगभग एक है जबकि विभिन्न वर्ग्गों व स्तरों पर जीवन जीने का तरीका है।

जहाँ नारी स्वयं को ऊँचे पद पर प्रतिष्ठित करती है। वह उसके मन में अपने घर परिवार के प्रति स्नेह भाव का कण्ठ अवरुद्ध होकर शून्य भाव उतरोत्तर विकास कर रहा है। शाल्मली स्वयं कहती है। "मेरा मन आजकल कहीं आने जाने को नहीं करता। काश! मैं अबोध बच्ची होती, कम से कम खिलौना पाकर थोड़ी देर के लिए ही सही रोना तो भूल जाती।[15]

अपना दुःख वह किस प्रकार प्रकट करें आज उसके लिए घटा घोट समस्या है। शाल्मली स्वयं कहती है "समाज के नियम क्या है? "क्या समाज में उनके लिए कोई नियम नहीं बनाया जिन्होंने बेटों को जन्म नहीं दिया, वे कहाँ जाएँ। अवसर पड़ा तो वह यह नियम, यह रीति-रिवाज तोड़ डालेगी।[16]

बसन्ती स्वयं समाज के नियमों की पालना नहीं करती। वह कहती है कि यदि घर से भाग न जाती तो उसका विवाह बुलाकी के साथ तय कर दिया जाता। इसलिए वह समाज के बनाये नियमों को ठुकरा देती है। मूल्यहीनता का बोलबाला ही समाज के प्रति विरक्ति के भावों को जन्म दे रहा है।

4. अहम् की उग्रता:

समाज की वर्तमान स्थिति में वैयक्तिक रुचि, महत्वाकांक्षा, स्वतन्त्र चेतना, अस्तित्व और अस्मिता की पहचान, सामाजिक बंधनों में शिक्षित बौद्धिक और अंहवादी व्यक्ति अपेक्षाकृत अधिक द्वन्द्व युक्त हो गया है। नारी की सहजता व सरलता का तथा सुख और आस्था का स्थान संघर्ष कठिनता व दुःख ने ले लिया है। एक समय में व्यक्ति स्वयं जिन मान्यताओं, आदर्शों, रीतियों द्वारा समाज व्यवस्था का नियमन अपने विचारों के द्वारा करता है, यही नियम परिवर्तन की प्रक्रिया से आने वाले समय में रूढ़ सिद्ध हो सकते हैं। हो

www.ignited.in

जाते हैं और परिस्थितिनुरूप व्यक्ति इन नियमों को तोड़कर नये विचारों, आदर्शों, मान्यताओं, रीतियों का निर्माण करता है। आधुनिक युग में मानव की इच्छाएँ, आकाक्षाएँ, अपेक्षाएँ बढ़ने लगी है, पर जब व्यक्ति की लक्ष्यपूर्ति में परम्परागत समाज व्यवस्था व परम्परागत मूल्य बाधक बनने लगे तो वह विद्रोही, द्वन्द्वी बन गया और अपने लक्ष्य पूर्ति के लिए संघर्ष करने लगा, परम्परागत रुढ़ियों का भजन कर नवचिन्तन व नवीन मूल्यों को अपनाने लगा।"[17]

नारी ने इन मूल्यों व रुढ़ियों के बंधन को स्वीकार नहीं किया, उसका जागृत दृष्टिकोण अपने आप में स्वतन्त्र निर्णय लेने की क्षमता में विकसित हुआ। समाज में उसके इस दृष्टिकोण को अहंवादी दृष्टिकोण कहा गया।

"स्वच्छन्दता युवा पीढ़ी में ही परम्परागत अनुपयोगी सामाजिक मूल्यों व वर्तमान के प्रति अनास्था, आत्मविश्वास की धारणा विकसित हुई। आज युवा आक्रोश, विद्रोह व नकार समाज की रुढ़ियों, नैतिक परम्पराओं से है।[18]

वह पुरानी पीढ़ी के ढकोसलों को सहने की शक्ति नहीं रखती है। शिक्षा, नौकरी, विवाह, सम्पति सभी स्थितियों में उसका स्वतन्त्र निर्णय का दृष्टिकोण रहा है। "अग्निगर्मा" उपन्यास में पांडेय जी की पुत्री पर सख्ती बरतने की कोशिश की और बैंक में नौकरी करने के लिए इन्कार किया पढ़ाई छुटवाने की धमकी दी तो वह चुप नहीं रही बोली "मैं बालिग हूँ पापा। लीगली आपका घर छोड़ दूँगी। मुक्ता जीजी और सीता जीजी की तरह आपकी जीवन की फिलोस्फी से बंधी नहीं हूँ। अपना रास्ता आप बनाऊंगी।[2] इस तरह अपना रास्ता अपने आप बनाने का निर्णय अहं की पूर्णता को बताता है। वह कैरियर बनाना चाहती है व उचित व्यक्ति से विवाह करना चाहती है।

"काली आंधी" उपन्यास की मालती का अहं उसके सम्पूर्ण व्यक्तित्व पर छा जाता है। वह राजनीति में मिली अपार सफलता के कारण वह अपने पति जग्गी बाबू से कहती है-" काश वह दिन देखने को मिलता जिस दिन तुम कुछ करके दिखा सकते।[19]

स्त्री द्वारा पति को चुनौती देना भारतीय समाज की संस्कृति के विरुद्ध है, किन्तु बदलते संदर्भों में नारी सम्मान धरातल पर है।

5. स्वतन्त्रता की चाह एवं आदर्शवादी दृष्टिकोण के प्रति उपेक्षा:

उन्नीसवीं शताब्दी से बीसवीं शताब्दी तक नारी का एकपक्षीय आदर्श था। वह सदैव ही अपने पति की अनुगामिनी बनी रही। उसे अपनी स्वतन्त्रता या व्यक्तित्व निर्माण की कोई आवश्यकता नहीं थी। बढ़ते महानगरीय बोध ने उसे झकझौर डाला क्योंकि यदि पति पर अनुरक्त रह, वह आदर्श कायम कर सकती थी तो वहीं दूसरी और उसने यथार्थ जीवन जीने की चेष्ठा में अपने स्वतन्त्र जीवन जीने की चाह भी पैदा की फलस्वरूप आदर्शों की अवहेलना होने लगी। अब नारी अपने अधिकारों व कत्तव्यों के प्रति पूर्व के प्रति अधिक सजग है। उन्हें प्राप्त करने की इच्छाशक्ति और अपेक्षा अब अधिक है। "उसे भी अपने स्वतन्त्र व्यक्तित्व व अधिकारों का ज्ञान हुआ। पति को पत्नी देवता, आराध्य के स्थान पर सच्चा साथी समझने लगी।[21]

आधुनिक काल में नारी में अनेक परिवर्तन हुए है। मिन्नी गोयल के अनुसार "आधुनिक काल नारी के लिए जागरण काल सिद्ध हुआ, विवाह में नारी सजग हो उठी, प्रजातन्त्र की विचारधारा नें नारी को फिर अपने अधिकारों और समानता के प्रति जागरुक बना दिया।[22] और जहाँ स्त्री में अपने अधिकारों के प्रति अधिक जागरुकता आयी वहीं उस परिवार में टूटन पैदा होने लगी वह स्वतन्त्रता की चाह में उसके क्षेत्र में आने वाले कत्तव्यों की उपेक्षा करती है। जिसे हम दूसरे शब्दों में आदर्शों की उपेक्षा भी कह सकते हैं। इस सब के बाद भी उसे वे अधिकार प्राप्त नहीं हो रहे बल्कि जीवन में संघ फैलता जा रहा है।

"संविधान बनने के बाद महिला सम्बंधी अनेक कानून बने हैं, पर आज महिलाओं की हालत संविधान पूर्व में दिनों से भिन्न नहीं है।[23] आज भी नारी की स्थिति वही है। अशेष उपन्यास में मुरली का जीवन स्वतन्त्रता की चाह रखता है वह कहती है- पता नहीं दीदी में ये लोग हम लड़कियों को क्या समझते हैं। मानों हम मनुष्य नहीं, कुछ करने को स्वतन्त्र नहीं - मैंने सोचकर योजना बनाकर कुछ नहीं किया, कुछ बाघा नहीं, फिर भी अम्मां नाराज है। स्वयं बापू के साथ कभी खुश नहीं रही थी, लेकिन मुझे मेरी पसंद का जीवन साथी नहीं पाने देती।[24]

6. नैतिक मान्यताओं की वैयक्तिकता:

व्यक्ति जब अपने सुख व मान्यताओं की पूर्ति के लिए सामाजिक व्यवस्था के बंधे-बंधाए नियमों से परे जाकर अपने कार्यों की संतुष्टि करना चाहता है, तब वैयक्तिकता और सामाजिक स्थितियों में टकराव की स्थिति उत्पन्न हो जाती है।

'सफेद मैमने' उपन्यास में बन्ना भी रामोतार की पत्नी होती है पर सन्दो को अपना पति मानती है, क्योंकि सन्दो से उसे

लगता है "पहली बार उसे पुरुष ने छुआ है।[25] उसने नैतिक मान्यताओं को अपने जीवन जीने के नजरिये से देखा है। "उसके हिस्से की धूप" की नायिका जितेन की पत्नी होती है अपने जीवन से उदासीन होकर मधुकर की सहवासी बनती है। पर चार वर्ष बाद जितेन से पुनः मिलने पर उसके साथ के लिए भी व्याकुल हो जाती है। वह प्रत्येक के साथ बिताया नया जीवन अपने में अलग मानती है। कहीं कोई स्थानापन्न नहीं है।[26] स्थिति यही तक नहीं है बल्कि "चितकोबरा" उपन्यास की नायिका पति से सम्बंध रखते हुए भी अपने विदेशी प्रेमी के साथ भी वह सन्तुष्टि पाती है। इसी तरह "सूरजमुखी अन्धेरे" में भी एक किशोर लड़की के साथ हुए बलात्कार के कारण उसे दोषी न मानकर मनोवैज्ञानिक आधार तलाशा गया है।

"मुक्तिबोध" उपन्यास में नीलिमा का विवाह मिस्टर दर से होता है किन्तु नीला के बर्ताव से तथा कुछ संकेतों से स्पष्ट दिखाई देता है कि वह इस विवाह से सन्तुष्ट नहीं है। परिणामस्वरूप वह कहीं सी गृहणी के रूप में दिखलाई नहीं देती। मिस्टर दर से उसने विवाह किया है फिर भी उसके जीवन का केन्द्र बिन्दु उसके सपनों का पुरुष मिस्टर सहाय ही है। मिस्टर सहाय के लिए ही अपने जीवन की सार्थकता समझती है। एक स्थान पर उसने कहा है- दर के साथ में रहती थी, पर जीती तुम्हारे लिए थी।[27] वह समाज के लिए नहीं अपने लिए जीना चाहती है। वह उन्मुक्त नारी है। वह दबने में विश्वास करती है न दबाने में। जीवन उसके लिए लहराता तत्त्व है। उसका स्वच्छन्द उन्मुक्त स्वभाव उसके आत्मकथन से ही प्रकट होता है। मुझे आकाश पसंद है जो खुला रहता है, दिशाएँ पसंद है जो बुलाती है चारों ओर से, किसी तरफ से रोकती नहीं। मैं नहीं रहना चाहती कमरों में, दड़बों में, मैं अन्नन्त में रहना चाहती हूँ।[28]

7. प्रेम का उन्मुक्त स्वरूप एवं प्रेम की विफलता:

"प्रेम" जीवन में रसात्मकता का प्रादुर्भाव करता है। प्रेम के सूक्ष्म उदात स्वरूप की मान्यता आज के उपन्यासों में भिन्न दिखलाई पड़ती है नयी पीढ़ी के सामने न कोई आदर्श है न ही कोई उच्च जीवन मूल्य ही। पुराने जीवन मूल्य खण्डित हो चुके हैं, किन्तु नये मूल्यों की स्थापना अभी नहीं हुई है। युवक कुण्ठित व दिशाहीन हो रहा है। अतः स्त्री-पुरुष के प्रेम सम्बंधों का आधार प्रायः गौण प्रतीत होता है। वास्तव में प्रेम का उन्मुक्त स्वरूप वासनात्मक स्थिति की और अधिक झुका है। प्रेम में भावुकता समाप्त हो गई है। स्वार्थवासना से युक्त प्रेम नया रुपान्तर बन गया है। प्रेम की स्थिति समाप्त हो गई है। जिसमें "प्रेम" एक दिव्यलोक माना जाता था। आधुनिक समाज में प्रेम का कोई सार्थक अस्तित्व नहीं रहा है। प्रेम की माँग बलिदान पर होती है। स्वार्थलिप्सा पर नहीं। अपना समय निकालने के लिए प्रेम का रुप परिवर्तन ढोंग हो गया है। वस्तुतः आज उपन्यासों में नारी ने खुलकर प्रेम के उन्मुक्त स्वरूप को स्वीकारा है। शेफाली प्रेम के उन्मुक्त स्वरूप को स्वीकारती हुई कहती है। "औरत का सम्बंध चाहे दुनियाँ के सभी मर्दों से क्यों न हो लेकिन प्यार करने के लिए तो उसे अलग आदमी चाहिए ही। एक ऐसा आदमी जिसको वह अपने इर्द गिर्द के तमाम आदमियों से अलग समझकर उसके लिए थोड़ा बहुत तड़प सके।[29]

अर्थात स्वार्थवृति का लोप हो व समर्पण की भावना एकाधिकार की भावना ही मूल है "शाल्मली" उपन्यास में शाल्मली कहती है। "प्रेम तो खुद देने वाली वस्तु है, उसे माँग कर क्या पाया जा सकता है।[30]

प्रेम की कोई सीमा नहीं है, कोई बंधन नहीं। शैफाली उपन्यास के अन्तर्गत अश्ति वैश्या से प्यार करता है। शैफाली कहती है "एक वेश्या से कोई प्यार कर सकता है इसका आभास वर्षों पहले अश्ति से मुझे मिला था।[31] मेहरुन्निसा परवेज के उपन्यास "कोरजा" में प्रेम को स्वचालित बताया गया है "प्यार को किसी सहारे या बहाने की जरुरत नहीं होती, वह तो खुद अपने लिए बहाने की तलाश कर लेता है रास्ते निकाल लेता है।[32]

प्यार शरीर से परे है, उसकी अपनी स्वतन्त्र सत्ता है उसकी सुगन्ध बासमती चावलों के पौधे जैसे चारों ओर महकती रहती है, उसे घेरे में बन्द नहीं किया जा सकता। प्रेम तन्तु ही जीवन की स्थिरता बनाये रखता है।[33] प्रेम के इस उन्मुक्त स्वरूप की विफलता भी देखने को मिलती है स्वार्थवासना में प्रेम का ढांचा ही परिवर्तित कर दिया है।

8. पश्चिमी संस्कृति और महानगरीय सभ्यता का प्रभाव:

महानगरीय जीवन का बढ़ता प्रभाव, नौकरी के लिए टूटे परिवार स्त्रियों का घर से बाहर निकलकर अर्थोपार्जन, पति पत्नी के सम्बंधों में भिन्नता, स्त्रियों का शिक्षा के प्रति बढ़ता रुझान, पति पत्नी के बीच तीसरे की चाह, लड़कियों का अपने पैरों पर खड़े होकर स्वतन्त्र रहने का निर्णय, विवाहित पुरुषों से मुक्त सम्बंध आदि सभी ऐसी स्थितियों में पश्चिमी सभ्यता का व संस्कृति का प्रभाव दृष्टि गोचर होता है। आधुनिक बनने की लालसा में जीवन मूल्य बदल गये। भारतीय संस्कार, नैतिकमूल्य, धार्मिक भावना कान्तिहीन होती दिखाई देती है। 70 परवर्ती उपन्यासों में नारी का बदलता दृष्टिकोण अपना अहं स्थान रखता है।

"काली आंधी" की नायिका मालती का व्यक्तित्व पश्चिम संस्कृति से ओतप्रोत है। जहाँ नारी के अपना घर-परिवार पहली

www.ignited.in

आकांक्षा मानी जाती रही, वहीं मालती ने अपने "कैरियर" को बनाने के लिए अपने छोटे से परिवार व बच्चे के लिए दो घड़ी का समय निकालना अत्यन्त मुश्किल लगता है। राजनीतिक जीवन में सफलता की प्रथम सीढ़ी पर चढ़ाने वाला स्वयं उसका पति किशोर है परन्तु शोहरत व प्रसिद्धि पुराने सम्बंधों के प्रति मोहभंग करती है। मालती का रहन-सहन पाश्चात्य संस्कृति के अनुरूप है। "मालती जी चश्मा लगाए थी, शाल कन्धों पर पड़ा था। कुछ कागज भी पलटती जा रही थी और सिगरेट भी पीती जा रही थी। नैतिक मान्यताओं को ठोकर लगाते ये पात्र अपने जीवन को अपने अनुरूप जीना चाहते हैं। नारी पुरुष के संकेत मात्र पर चलने वाली नहीं। यह ढांचा बुरी तरह टूटा दिखाई पड़ता है। प्रतिध्वनियाँ में नीलकान्त और अंचला पति पत्नी बनते हैं। सामाजिकता निभाने के लिए पर व्यक्तिगत सम्बंध मात्र एक समझौता होता है जीवन भर का। वह अपने पति से स्पष्ट अपने प्रेमी के सम्बंध में बताती है तथा यह भी कि वह हमेशा अपने प्रेमी से करना चाहती है।[34] अंचला को अपने पति को सब कुछ साफ-साफ बताने में कोई झिझक महसूस नहीं होती। पति पत्नी सम्बंधों के इतरेतर सम्बंधों में भी इसका स्पष्ट प्रभाव देखा जा सकता है। माता-पिता भी अर्थोपार्जन में लगी पुत्री के विवाह को लेकर चिन्तित नहीं होते जहाँ 70 पूर्व उपन्यासों की पात्रा सुषमा पारिवारिक जिम्मेदारियों के प्रति अपने व्यक्तिगत जीवन का गला घोंटती है वहीं दूसरी ओर कर्करेखा की तनु विवाह तो करती है किन्तु उसकी माँ यह अपेक्षा रखती है कि विवाह के पश्चात तनु कुछ समय तक उसके पास रहे, ताकि कर्जदारी में हाथ बंटा सके। महानगरीय सभ्यता का बढ़ता चाह अर्थ की दृष्टि से सिर चढ़कर बोल रहा है।

9. स्त्री-पुरुष मैत्री की बदलती अवधारणा:

भारतीय समाज में परम्रागत स्त्री, पुरुष सम्बन्धों की अवहेलना करके पति पत्नी के संबन्धों को मुख्य माना जाता रहा है। स्त्री पुरुष सम्बन्ध निर्वाह में प्राचीन पाप-पुण्य एवं नैतिकता-अनैतिकता की बात शेष रही नहीं। इसलिए इस सम्बन्ध में परिवर्तन हो रहा है। पति-पत्नी के प्राचीन एक निष्ठा मूलक मूल्यों में भी परिवर्तन हो रहा है। स्त्री-पुरुष का तात्पर्य मात्र पति-पत्नी से ही नहीं लगाया जाता है।

पति-पत्नी सम्बंध तो एक ऋण की मुक्ति भर है "जब शरीर अपना ऋण चुका देगा, तमाम बकाया अदा कर देगा तो मुक्त कर दिया जायेगा। फिर चाहे तो चैन से सो रहे अगली वसूली के दिन तक।35

"सत्तर के पार" उपन्यास में पत्नी विवाह को मात्र जीवन का एक प्रयोग मानने लगी है इतना ही नहीं स्त्री-पुरुष सम्बंध यहाँ तक बिगडे हैं कि पत्नी अपने प्रेमी को नीचा दिखाने भर तक का उद्देश्य लेकर विवाह करने लगी है।[36]

10. पुरातन चिन्तन का नूतन सन्दर्भ:

भारतीय समाज में परम्परागत चिन्तन आज भी वहीं है हालांकि उसका सन्दर्भ बदला हुआ प्रतीत होता है। लड़की के जन्म, शिक्षा, विवाह, अर्थ सम्बंधी स्वतन्त्रता, स्वतन्त्र निर्णय की क्षमता सभी पर पौराणिक चिन्तन स्पष्ट दिखलाई देता है।

"ठीकरे की मंगनी" उपन्यास में पुयफो नारी की स्थिति पर सोचते हुए कहती है "क्या खाक कहते हैं कि जमाना बदला है। पहले लड़की पैदा होते ही गाड़ दी जाती थी, आज पाल-पोस कर जवान लड़की दफन कर दी जाती है।"[36] परम्परागत विवाह के मूल्यों में विवाह जन्म-जन्मान्तर का सम्बंध अटूट प्रेम रिश्ता और आत्मिक सम्बंध माना गया है पर विवाह मूल्य में धीरे-धीरे परिवर्तन आने लगा और बंधन शिथिल होने लगे। "विवाह एक आर्थिक समझौता प्रेम समझौता मात्र तक ही सीमित होने लगा।"[37] इस स्थिति को देखते हुए ऐसा प्रतीत होने लगा कि अर्थ ही सबके केन्द्र में है। "अब आधुनिक परिवार ही ध्यान के लिए हिरण्य ब्रह्म हो गया है। निजी स्वार्थ केन्द्र में आ गया है। क्योंकि अर्थतन्त्र में भी केवल लाभ (स्वार्थ) की नैतिकता ही शिरोधार्य हुई है।[38]

नारी स्वयं अपने पैरो पर खड़ी है किन्तु शाल्मली स्वयं सोचती है "यह खाई जितनी अधिक चोड़ी और गहरी नजर आती है फिर खुद यह कहकर स्वयं को सम्भालती है यह किसी एक का दोष नहीं बल्कि पूरे सामाजिक सोच को बदलने का प्रश्न है। तभी पुराना ढांचा टूटेगा और नया धीरे-धीरे करके उसकी जगह खडा होगा।[39]

वैवाहिक सम्बन्धों में शिथिलता बढ़ती जा रही। जहाँ पति को परमेश्वर की नजर से देखा जा रहा था वहाँ आज पति-पत्नी सम्बन्ध मित्रवत हो गये हैं। विवाह पर दिया जाने वाला दहेज की नूतन व्याख्या की गई है। विवाह सम्बन्धी पुरातन स्थितियों को नूतन संदर्भों मे बदला गया है।

"अन्धेरा उजाला" उपन्यास में प्रगति के विवाह पर वह कहती है-फेरा के द्वारा पहले दो प्राणी दूसरे से बाँध दिये जाते थे। अब वे दोनों एक-दूसरे को अंगीकार करेंगे।[40] नारी में नवीन चेतना का विकास होता दिखाई देता है। जयमाला पहनाने की बात का प्रगति ने विरोध किया उसका विचार था "उसे कोई लड़ाई में जीता नहीं गया है फिर जयमाला कैसी।"[41]

www.ignited.in

इस प्रकार नारी ने अपनी पुरानी मान्यताओं व जीवन मूल्यों को नूतन संदर्भों में व्यवस्थापित किया है।

संदर्भ सूची:

1. डॉ. देवराज, संस्कृति का दार्शनिक विवेचन, पृ 368-369
2. नासीरा शर्मा, शाल्मली, पृ. 135
3. क्रान्ति त्रिवेदी, पृ. 117
4. डॉ. देवराज, संस्कृति का दार्शनिक विवेचन, पृ. 368
5. नासिरा शर्मा, शाल्मली, पृ. 25
6. कान्ति त्रिवेदी, अशेष, पृ. 92
7. नासिरा शर्मा, ठीकरे की भाँति, पृ. 197
8. ऊषा प्रियम्वदा, शेष यात्रा, पृ. 63
9. नासिरा शर्मा, ठीकरे की मंगनी, पृ. 66
10. शैलेश मटियानी, सवित्तरी, पृ. 78
11. शशिप्रभा शास्त्री, उम्र एक गलियारे की, पृ. 114
12. विष्णु पंकज, अंधेरा-उजाला, पृ. 7
13. नासिरा शर्मा, शाल्मली, पृ. 146
14. डॉ. मंजुला गुप्ता, हिन्दी उपन्यास, समाज और व्यक्ति का द्वन्द्व, पृ. 35
15. नासिरा शर्मा, शाल्मली, पृ. 96
16. नरेश कुमार शर्मा, त्रिकोण, पृ. 76
17. डॉ. मंजुला गुप्ता, हिन्दी उपन्यास-समाज और व्यक्ति का द्वन्द्व, पृ. 12
18. डॉ. मंजुला गुप्ता, हिन्दी उपन्यास-समाज और व्यक्ति का द्वन्द्व, पृ. 3
19. अमृतलाल नागर, अग्निगर्भा, पृ. 104
20. कमलेश्वर, काली आंधी, पृ. 9
21. डॉ. उर्मिला भटनागर, हिन्दी उपन्यास साहित्य में दाम्पत्य चित्रण, पृ. 196
22. मिन्नी गोयल, जागृति, अक्टूबर 1989 लेख इक्कीसवीं शताब्दी और भारतीय नारी, पृ. 36
23. श्यामला पप्पू, आजकल लेख अधिकार की सीमाएँ, पृ. 21
24. कातिचन्द त्रिवेदी, अशेष पृ. 75
25. मणि मधुकर, सफेद मेमने, पृ. 120
26. मृदुला गर्ग, उसके हिस्से की धूप, पृ. 50
27. जैनेन्द्र कुमार जैन, मुक्तिबोध, पृ. 83
28. जैनेन्द्र कुमार जैन, मुक्तिबोध, पृ. 54
29. अभिमन्यु अजत, शैफाली, पृ. 61
30. नासिरा शर्मा, शाल्मली, पृ. 121
31. अभिमन्यु अन्नत, शैफाली, पृ. 91
32. मेहरुन्निसा परवेज, कोरजा, पृ. 82
33. क्रान्तिचन्द त्रिवेदी, अशेष, पृ. 84
34. दीप्ति खण्डेलवाल, प्रतिध्वनियाँ
35. मृदुला गर्ग, चितकोबरा, पृ. 110
36. हंसराज रहवर, पंखहीन तितली
36. नासिरा शर्मा, ठीकरे की मंगनी, पृ. 135
37. डॉ. मंजुला गुप्ता, हिन्दी उपन्यास-समाज और व्यक्ति का द्वन्द्व, पृ. 22
38. रमेश कुन्तल मेध, आधुनिका बोध और आधुनिकिरण, पृ. 84
39. नासिरा शर्मा, शात्मली, पृ. 86
40. विष्णु पंकज, अन्धेरा उजाला, पृ. 94
41. वही, पृ. 96

www.ignited.in

Corresponding Author

Pratima*

Researcher, Ph.D. (Hindi), OPJS University, Churu, Rajasthan